समयसार ग्यारहवीं गाथा का भावार्थ। प्राणियों को यहाँ से है... है ? प्रयोजनवश नय को मुख्य गौण करके कहते हैं। यहाँ तक आ चुका है। क्या कहा ? कि त्रिकाली आत्मा जो निश्चय है और ***निश्चय तो द्रव्य भी है गुण भी है और पर्याय भी है। स्व की अपेक्षा निश्चय है, पर की अपेक्षा व्यवहार है। अब यहाँ त्रिकाली को निश्चय कहा, इसके गुण भेद को पर्याय और व्यवहार में डाला। क्योंकि ? त्रिकाली, ज्ञायक भाव, ध्रुव भाव, यह मुख्य है इसलिये यह निश्चय है, और उसके आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है। इसलिये मुख्य को निश्चय कहकर और पर्यायादि के व्यवहार को गौण करके `नहीं' - ऐसा कहने में आया था।*** गौण करके कहने में आया था। मुख्य-गौण, मुख्य वह त्रिकाली वस्तु एवं पर्याय और रागादिक व्यवहार उसे गौण करके `नहीं' - ऐसा कहा था, और यह मुख्य कहकर निश्चय है, सत्यार्थ है - ऐसा

कहने में आया था।

अरे ! क्यों कहने में आया था इसमें कहते हैं। आहाहा ! `कि प्राणियों को, जीवों को भेदरूप व्यवहर का पक्ष'... भेदरूप पर्याय का और गुण-गुणी के भेद का, राग का, आहा ! `ऐसे भेदरूप व्यवहार का पक्ष तो अनादि काल से है' अनादि काल से है। वस्तु अखण्ड, अभेद है, उसका तो पक्ष और आश्रय कभी लिया नहीं। इसलिये अनादि से अज्ञानी को गुण-गुणी के भेद का अथवा पर्याय के भेद का कि राग का पक्ष अनादि से है। समझ में आता है कुछ ?

प्राणियों को... बहुत जीवों को एक को नहीं, प्राणियों को। आहाहा ! भेदरूप व्यवहार, एक समय की पर्याय और राग एवं गुण-गुणी भेद यह सभी पक्ष व्यवहार का पक्ष, यह भेदरूप व्यवहार... सूक्ष्मबात है। गाथा भी बहुत सूक्ष्म है और भावार्थ पण्डितजी ने बहुत सरल किया है। आहाहा !

भेदरूप व्यवहार... इसका पक्ष तो अनादि से प्राणियों को अर्थात बहुतसे जीवों को तो है, एक बात। `और उसका उपदेश की बहुधा सर्व प्राणियो .... परस्पर करते है' इसका उपदेश भी... व्रत करो, उपवास करो, व्यवहार सम्यग्दर्शन का आचरण, व्यवहार ज्ञान का आचरण तप का आचरण, व्यवहार का उपदेश तो अज्ञानी परस्पर एक दूसरों को करते हैं। आहाहा ! जीवंत चित्र खींचा है। परस्पर यह तो प्ररूपण करते हैं (एवं) सारी दुनियाँ मानती है। कहनेवाले (तो) कहते हैं, परंतु सुननेवाले भी कहते हैं कि वाह ! यह ठीक है, वह तो निश्चय निश्चय की बातें करते हैं।

व्रत, तप, भक्ति, पूजा, देव-गुरु-शास्त्र का विनय। समकिती के आठ व्यवहार अंग, व्यवहाररूप ज्ञानाचार यह करने जैसे है, यह साधन है - ऐसा अज्ञानियों का उपदेश (है) है ? उनका उपदेश `भी', भी अर्थात वह भेद (रूप) व्यवहार का पक्ष तो है उसमें यह दूसरी बात। उपदेश करनेवालों को भी अनादि से इस बात (की) रुचि है। आहाहा ! उपदेश भी... - ऐसा है न ? अर्थात पहली बात रखकर, बहुत अधिक लोगों का, सर्व प्राणी परस्पर करते हैं। व्यवहार समकित का आचरण, व्यवहार ज्ञान आचरण, चारित्र का आचरण व्रत, तप, व्यवहार नियम आदि आहाहा ! और तप के व्यवहार आचरण अनशनादि, ऊनोदर वगैरह... उपवास करो त्याग करो, ऊनोदर करो रस छोड़ो, - ऐसा बहुधा प्राणी एक दूसरे को परस्पर एक दूसरे को बात बैठती है (समझ में आती है) इसलिये बहुत से यह करते हैं। समझ में आया ? आहाहाहा ! अरे संक्षेप में कितना भरा है देखो न !

कि अनादि का इसको भेदरूप व्यवहार का पक्ष तो है और बहुधा प्राणियों इसीका उपदेश देते है। (श्रोता :- उपदेशक भी - ऐसा है) हाँ ? इसे उपदेशक भी ऐसे

ऐसे मिले हैं। आहाहा ! बहुत कठिन बात तब... परस्पर कहा-एक दूसरों को उपदेश करते हैं और वह हाँ करते हैं। ऐसे ही निश्चय की प्राप्ति होती होगी ? निश्चय, निश्चय की बातें करें परंतु व्यवहार साधन बिना निश्चय प्राप्त हो ? (श्रोता :- व्यवहार साधन है ?) साधन है - ऐसा कहलाता है - कथन में, परंतु यह वास्तव में साधन है नहीं। आहाहा ! परस्पर यह उपदेश करते हैं। आहाहा ! उपदेशक भी, व्यवहार से लाभ होता है और भेद के पक्ष की बातें, व्यवहार समकित का आचरण, व्यवहार सम्यक्त्व का, व्यवहार ज्ञान का आचरण, ज्ञान, विनय, उपाधान वगैरह। व्यवहार व्रत तप व्यवहार अनशन, ऊनोदर आदि तप, उसकी बातें व्यवहार से सुने तब लाभ हो, कुछ व्यवहार करें तो लाभ हो - ऐसा परस्पर उपदेश अज्ञानियों बहुत, बहुत प्राणियों करते हैं। बात समझमें आती है कुछ ?

(श्रोता :- इसमें कह इसप्रकार बहुधा लोग ऐसी बातें करते हैं) बहुधा यही करते हैं। अब बाद में तीसरे बोल में थोड़ी सूक्ष्म बात आयेगी। आहाहा ! भगवान आत्मा एक समय में परिपूर्ण चीज, उसका आश्रय लेने पर सम्यग्दर्शन होता है, सम्यग्ज्ञान होता है, सम्यग्चारित्र होता है। यह बात छोड़कर `बहुधा प्राणियों एक-दूसरे को व्यवहार का ही उपदेश करते है' प्रथम तो उन्हें भेदरूप व्यवहार रुचता है अनादि का, और उसके उपदेशक भी ऐसे उन्हें मिले। आहाहा ! समझ में आया ? उपदेशक भी तेहवा (ऐसे), आता है न ? क्या करे जीव नवीन ? इसके पहले क्या आता है ? **`द्रव्य रुचि कर जीवड़ा भावरूचिकर हीन... उपदेशक पण तेहवा शुं करे जीव नवीन ?** आहाहा ! द्रव्य रुचि कर जीवड़ा, व्यवहार की रुचि व्रत और तप एवं उपवास तथा देव-गुरु की विनय करो भक्ति करो, पूजा करो, व्रत करो, उपवास करो, व्यवहार सम्यग्दर्शन के आठ आचार (अंग) बराबर पालो, व्यवहार ज्ञान के आचार बराबर पालो क्योंकि भगवान ने भी व्यवहार कहा है न ?' कहा है कि नहीं ? परंतु कहा है यह किस कारण ? यह तो निश्चय के साथ निमित्त देखकर सहचर (देखकर) उपचार से व्यवहार कहा है। `परंतु इसका फल... बंधन है' आहाहा ! समझ में आया ?

शांति से यह तो... वस्तु में... व्यवहार अभूतार्थ है, असत्यार्थ है। निश्चय सत्यार्थ है और निश्चय भूतार्थ का आश्रय लेने से सम्यग्दर्शन होता है, ऐसी जो मूल गाथा और मूल वस्तु (है)। तब कहते हैं कि - ऐसा क्यों कहा ? कि व्यवहार झूठा (है) ? कि भाई यह तो गौण करके झूठा कहा है। व्यवहार व्यवहार अपेक्षा नहीं पर्याय अपेक्षा नहीं - ऐसा नहीं। इसप्रकार भूमिकानुसार राग रूप व्यवहार आता है, यह नहीं - ऐसा नहीं, परंतु उसे गौण करके और त्रिकाली मुख्य की दृष्टि कराने के लिए त्रिकाली वह सत्य है, और पर्याय आदि का व्यवहार वह असत्य है, यह गौण

करके असत्य कहा है। अभाव करके असत्य कहा नहीं, इसलिये इसे मुख्य गौण करके कहने में आया है। आहाहा !

तब - ऐसा कैसे कहा कि व्यवहार का भेदरूप व्यवहार का पक्ष तो अनादि काल से स्वयं से यह स्वच्छंदी है। और उपदेशक भी ऐसे मिले हैं। व्यवहार का उपदेश करके और दूसरों को लाभ हो - ऐसा सुननेवालों की भी इसमें ठीक लगता है। बाबूलालजी ! आहाहा ! है ? इसका उपदेश भी... किसका उपदेश ? व्यवहार का, दया-दान, व्रत-तप करो, विनय करो, भक्ति करो, सम्यग्दर्शन का अंग पालना बराबर, व्यवहार के, इसका उपदेश भी; प्रथम तो व्यवहार का पक्ष इसको अनादि का है तथा इमसें उपदश देनेवाले भी ऐसे मिले हैं। आहा ! परंतु बहुधा अर्थात अधिकांश, सर्वप्राणी, अधिकांश सर्व प्राणी आपस में (उपदेश) करते है। कहनेवाले कहते हैं सुननेवाले प्रसन्नता से हाँ करके (स्वीकार करते) ठीक है, यही साधन चाहिए, यों ही होता होगा, अकेले निश्चय की बातें करते हैं। समझ में आया ? आहाहा !

इसप्रकार बहुत से अज्ञानी प्राणी तो व्यवहार का परस्पर उपदेश देकर प्रसन्न होते हैं, कहते कि बहुत अच्छी आपने अच्छी बात कही, और यह करते-करते होता है न, कि यों ही होता होगा ? ***अशुभ टाले शुभ करे फिर शुभ से शुद्ध होगा।*** (श्रोता :- क्रम तो - ऐसा ही है न ?) ***यह क्रम ही नहीं। यह क्रम तो सम्यग्दर्शन पाने के बाद स्वरूप की दृष्टि द्रव्य का आश्रय करने के बाद पहले चारित्र के अशुभ परिणाम टाले और फिर शुभ के टाले यह तो इस अपेक्षा से है। (श्रोता :- सम्यग्दर्शन के बाद की बात है ?) सम्यग्दर्शन के बाद की बात है। आहाहा ! समझ में आया ? यह मोक्षमार्ग प्रकाशक के सातवें अध्याय में आता है।***

प्रथम तो त्रिकाली आत्मा आनंद स्वरूप अभेद उसका आश्रय लेकर सम्यग्दर्शन होता है उसका अनुभव होता है, और इस जीव को पहले चारित्र का अशुभ दोष है यह उसे हटाये, फिर वह शुभ को टाल कर शुद्ध उपयोग में जाये। परंतु पहली दृष्टि तो शुद्ध उपयोग में आत्मा की दृष्टि हुई हो उसके लिये यह बात है। आहाहा ! समझ में आया ?

(श्रोता :- अज्ञानी को क्या करना ?) अज्ञानी को करना यह व्यवहार छोड़कर निश्चय करना यह अज्ञानी को करना - ऐसा कहते हैं। अभी आयेगा अभी अब अभी तीसरे बोल में कठिन है। दो बोल तो... समझ में आये ? उसका उपदेश भी... अर्थात वह भेद का पक्ष तो है इसके अलावा उसका उपदेश देनेवाले भी बहुधा सर्व प्राणी परस्पर करते हैं, आहाहा ! दो बातें।

अब तीसरी बात... `जिनवाणी में,'... अब वीतराग की वाणी में भी व्यवहार का

उपदेश बहुत आया है। समझ में आया ? जिनवाणी में व्यवहार का उपदेश शुद्धनय का हस्तावलम्बन अर्थात शुद्धनय स्वभाव की दृष्टि में, उस समय हस्तावलम्ब अर्थात सहायक, सहचर देखकर साथ में - ऐसा शुभभाव व्रत, तप... सम्यक्निश्चय है उसे सहचर अपेक्षा निमित्त रूप... व्यवहार समकित के आठ आचार होते हैं! समझ में आया ? उसका उपदेश जिनवाणी में भी आया है। समझ में आया ? आहाहा !

प्रवचनसार में चरणानुयोग (चूलिका) में कहा न ? हे दर्शनाचार, समकित का व्यवहार दर्शनाचार, निःशंक आदि मैं जानता हूँ कि तुम मेरा स्वरूप नहीं। प्रवचनसार ! तुम मेरा स्वरूप नहीं, मैं जानता हूँ, परंतु तम्हारी कृपा से, यह सभी व्यवहार के कथन है। जहाँ तक मैं पूर्ण शुद्धि को न पायें तब तक तुम्हारा प्रसाद अर्थात तुम्हें निमित्तरूप में अंगीकार करता हूँ - ऐसा है वहाँ। आहाहा !

कहो ! जिनवाणी में भी - ऐसा आया है, कहते हैं, प्रथम तो भेद का पक्ष इसे है, परस्पर उपदेश भी प्राणी बहुत करते है और तीसरा जिनवाणी में भी व्यवहार का उपदेश बहुत आया है। आहाहा !

(श्रोता :- सब एक ही जाति का है, तब भेद क्यों करते है ? सभी क्रम एक ही जाति का तो भेद क्यो करते है ? शुभ और अशुभ एक ही जाति का है तो उसमें भेद क्यों करना ? (उत्तर) कौन करता है भेद ? यह (तो) उसे अभी देरी है, भेद कहाँ...! यह तो सम्यग्दर्शन होने के बाद सम्यग्दर्शन का अनुभव होने के बाद, पहले एकदम शुभ टाल सकते नहीं। प्रथम अशुभ टालकर शुभ में आये, फिर शुभ टालकर (छोड़कर) शुद्ध में आये, परंतु यह तो सम्यग्दर्शन होने के बाद की बात है। सम्यग्दर्शन पहले तो यह बिलकुल एकदम झूठी बात है बिलकुल अशुभ टले और शुभ आये, इसलिये उसे सम्यग्दर्शन हो... एकदम मिथ्यादृष्टि है। समझ में आया ? यही तो यहाँ कहते हैं।

उसे शुभभाव का (पक्ष है) उससे धर्म होता है, भेद से धरम होगा, भेदरूप व्यवहार से लाभ होगा - ऐसी दृष्टि तो... मिथ्यादृष्टि की अनादि से है। सूक्ष्मबात है और दूसरी (बात) उपदेशक भी उसे - ऐसा कहते हैं। व्यवहार करो, यह व्यवहार तप करो, उपवास करो, त्याग करो। आहाहा ! सम्यग्दर्शन के व्यवहार आठ अंग पहले पालो, फिर निश्चय सम्यग्दर्शन होगा - इसप्रकार बहुधा अज्ञानी उपदेशक, परस्पर - ऐसा उपदेश करते हैं।

अब, बात इससे आगे ले जाकर, (श्रोता :- शास्त्रों में भी - ऐसा है) शास्त्रों में... जिनवाणी में भी व्यवहार का उपदेश शुद्धनय का निमित्त, सहचर सहायक अर्थात साथ में जानकर शुद्धनय का उपदेश अंतर अनुभव, दृष्टि होने पर भी साथ में उसे

अभी पूर्ण वीतरागता नहीं हुई, तब उसके साथ में, अंदर साथ में व्यवहार सम्यग्दर्शन व्यवहारज्ञान आदि आये, समझ में आया ? इसलिये इसे निमित्त सहचर देखकर बहुत किया है। जिनवाणी में भी उपदेश बहुत किया है व्यवहार का, आहाहा ! शास्त्रों में तो व्यवहार का उपदेश बहुत है, परंतु इसका फल संसार है। भटकना ही है। आहाहा ! है ? इसका फल संसार ही है। जिनवाणी में जो व्यवहार कहा... उसका फल भी बंधन और संसार है। आहाहा ! न्याय समझ में आता है कुछ ?

क्योंकि अभी कहा न ! प्रवचनसार चरणानुयोग (चूलिका) सम्यक्त्व के आठ अंग, यह सम्यग्दर्शन होने के बाद की बात है। आत्मज्ञान अनुभव हुआ है पहले, द्रव्य का आश्रय लेने से अभेद की दृष्टि प्रगटी है। आत्मा के आनंद की दशा का स्वाद आनंद का स्वाद आया है। - ऐसा समकिती को ... प्रथम - ऐसा कहते हैं कि हे दर्शनाचार ! व्यवहार ! हे ज्ञानाचार। मैं जानता हूँ कि तुम मेरा स्वरूप नहीं। आहाहाहा !

व्यवहार व्रत तप आदि के भाव को कहते हैं कि मैं जानता हूँ कि व्यवहार महाव्रतादि के परिणाम, यह हमारा स्वरूप नहीं। परंतु हमारी पूर्ण वीतराग न हो, तब हमारे अनुभव के साथ तुम्हारा (व्यवहार) होता है, इसलिए उसे व्यवहार से अंगीकार करता हूँ - ऐसा कहा जाता है। आहाहा !

(श्रोता :- ऐसा भी कहा कि तुम्हारी कृपा से) कहा न व्यवहार से... - ऐसा कहा तुम्हारी कृपा से... अर्थात तुम्हारा यह निमित्त है न ? सहचर है न ? जहाँ तक मैं पूर्ण वीतरागी न होऊँ वहाँ तक मेरे निश्चय अनुभव के साथ, तुम्हारा सहचर देखकर, तुम्हारे प्रसाद से अर्थात निमित्त के कारण यह व्यवहार का कथन है। हमारी प्राप्ति होगी। आहाहाहा ! है तो यहाँ व्यवहार का फल बंधन। जिनवाणी ने कहा इसका फल बंधन है। अब इस बंधन के कारण अबंध दशा हो ? बड़ा घोटाला अभी पूरा, मिथ्याश्रद्धा का पोषण ही है अभी पूरा। आहाहा ! परिसह सहन करो उपसर्ग सहन करो।

(श्रोता :- परिषह उपसर्ग तो मिथ्यात्व का है) परिषह भी किसे हो ? जिसे सम्यग्दर्शन, आनंद का अनुभव हुआ है, उसे प्रतिकूलता के समय सहन करने की दशा को परिषह कहते हैं, अज्ञानी को परिषह कैसा ? यह तो उसे अकेला कष्ट है। आहाहा !

इस तीसरे बोल में बहुत कठिन बात है, जिनवाणी में भी... जिनवाणी में व्यवहार का उपदेश... आहाहा ! क्योंकि निश्चय सम्यक्त्व जो आत्मा के अवलम्बन से होता उसके साथ व्यवहार समकित के आठ अंग, निमित्त रूपसे साथ में सहचर होने से, उपचार से उसे व्यवहार का उपदेश किया। आहाहा ! इसीप्रकार निश्चय सम्यग्ज्ञान

अनुभव हुआ, आत्मा के आनन्द का ज्ञान हुआ, उस ज्ञान के साथ, आठ आचार जो श्रुतज्ञान के है, विनय करना, उपधान करना... आदि यह साथ में होते हैं सहचररूप में निमित्तरूप में, इसलिये उसका उपदेश भगवान ने दिया (है)। फिर भी उस निमित्त का फल, सहचर जो है उसका फल, संसार (में) भटकना है। आहाहाहा ! हीराभाई ! आहाहा !

कहा न ? समयसार नाटक... कि जो आत्मा के अंदर सम्यग्दर्शन अनुभव हुआ मुनिपना हुआ। अंदर अतीन्द्रिय आनंद की लहर जाग उठी, उनको भी पंचमहाव्रत का विकल्प व्यवहार आये, समझ में आया ? परंतु यह जग पंथ है। यह संसार पंथ है। शुभराग यह स्वयं संसार पंथ है।

तव कहते हैं भगवान ने इसे क्यों कहा ? कि यह वस्तुस्वरूप के ज्ञानवालों के साथ एक - ऐसा व्यवहार राग की मंदता का भाव निमित्त अपेक्षा होता है, इस कारण उसे - ऐसा व्यवहार कहा है। परंतु इसका फल संसार है। आहाहाहा ! समझ में आया ? है कि नहीं इसमें देखो न ! पाठ पढ़े तो ख्याल आये। आहा ! बहुत मीठी बात है। यह तो अलौकिक बातें है बापा ! आहाहा ! अभी तो शास्त्र पढ़ना भी आता नहीं, उसे समझना तो... आहाहा !

कहते हैं कि हम यहाँ त्रिकाली भगवान पूर्णानंद का नाथ को सम्यक् सत्यार्थ कहा, और हमने पर्याय को उसके गुण भेद को `नहीं' - ऐसा कहा। असत्यार्थ है - ऐसा कहा। क्यों ? यह तो मुख्य गौण करके कहा है। त्रिकाली को मुख्य किया और निश्चय कहा और उसका आश्रय कराया है और पर्याय के भेदों को गौण करके `नहीं' कहकर व्यवहार कहा `नहीं' - ऐसा कहा है। परंतु इस पर्याय में व्यवहार आता है। सम्यग्दृष्टि को भी... आहाहाहा ! (श्रोता :- समकिती को सच्चा व्यवहार होता है) फिर भी इस व्यवहार का फल संसार है - यहाँ तो - ऐसा कहा है। आहाहा ! समझ में आया ? बहुत शांति से समझने जैसा है बापू ! अभी तो संप्रदाय में बड़ा विरोध उठा है इसका। कि सोनगढ़ का निश्चयाभास है और एकांत है एवं इसप्रकार कहते हैं, पता नहीं उन्हें तब क्या करें।

यहाँ तो ग्रंथकार नहीं, परंतु सिद्धांतकार स्वयं कहते हैं कि व्यवहार और पर्याय वह झूठी है। - ऐसा कहकर उसे गौण करके झूठी है - ऐसा कहा है, उसका अस्तित्व तो है, इसीप्रकार दया, दान, व्रत, भक्ति के परिणाम का अस्तित्व तो है, परंतु उसे गौण करके, और यह नहीं तथा त्रिकाली सत्य है उसे सत्यार्थ कहकर मुख्य करके निश्चय कहा उसका आश्रय कराया है। अरे..रे..! आहाहा ! समझ में आया कुछ ?

जिनवाणी में भी... बाद में कहेंगे जिनवाणी में व्यवहार का उपदेश शुद्धनय के साथ व्यवहार होने से, सहायक अर्थात सहचर साथ में होने से, निमित्त गिनकर, समझकर बहुत किया है, बीच में निमित्त आता है, व्यवहार आता है, जिनवाणी ने उसका उपदेश किया है। आहाहा ! दर्शनाचार ! ज्ञानाचार ! चारित्राचार ! तपाचार ! वीर्याचार ! लो ! आहाहा ! यह सभी आये, परंतु इस व्यवहार का फल तो... संसार है।

समकिति को जो व्यवहार आता है उसका फल संसार है। अज्ञानी को तो व्यवहार होता नहीं। व्यवहारभास है। आहाहाहा ! कहो `रतिभाई'! - ऐसा सूक्ष्म है। ओहो ! टीकाकार ने कितनी स्पष्टता की है। गाथा में यह भाव है, क्योंकि व्यवहार को झूठा कहा, निश्चय को सच्चा कहा, तब व्यवहार का उपदेश तो केवली ने भी दिया है। तो भाई यह झूठा कहा, यह गौण करके झूठा कहा है और निश्चय को मुख्य करके निश्चय कहा है। त्रिकाली को मुख्य करके निश्चय कहा है।

परंतु - ऐसा क्यों कहा ? निश्चय को ही सत्य कहा और व्यवहार को असत्य गौण करके कहा, क्यों कहा ? कि भेद का और व्यवहार का पक्ष तो जीव को अनादि से है और यह परस्पर उपदेश करते ही हैं, इसलिये यह उपदेश किया है और तीसरी बात, जिनवाणी में भी जहां तहाँ व्यवहार का उपदेश बहुत है। ज्ञान का आचार एवं सम्यक्त का व्यवहार आचार पालना चाहिए न ! व्यवहार सम्यक्त्व के आठ अंग यह तो विकल्प राग है। ज्ञान के आठ आचार विनय से पढ़ना और यह कहना और यह भी तो शुभ राग है। चारित्र का व्यवहार व्रत, तप आदि जो अनशन ऊनोदर आदि तप, यह सभी शुभराग है। आहाहा ! परंतु बीच में - ऐसा व्यवहार आता है इसलिये ज्ञानी को भी - ऐसा साथ में निमित्त देखकर भगवान ने उसका उपदेश किया है उसको कथन करके समझाया है परंतु उसका फल तो संसार है। आहाहा ! गजब बात है !

एक चैतन्य भगवान परिपूर्ण प्रभु ! उसके आश्रय से होनेवाला एक मार्ग ही सत्य है और उसका फल मोक्ष है। शेष जो निश्चय स्वभाव के आश्रयसे भान होनेवाले को भी, जिनवाणी में कहा हुआ व्यवहार आता है, फिर भी उसका फल संसार है। आहाहाहाहा ! है न इसमें ? (श्रोता :- है, है इसका फल संसार है) संसार ही है।

दिवाली आये तब घर के बही खाते कितने मिलाते हो ? तब यह शास्त्ररूपी बही खाते मिलाने पढ़ेंगे कि नहीं ? दिवाली आये तब बही खाते मिलाते है कि नहीं भाई ! यह दो लाख-पांच लाख का खर्च हुआ, इसमें लाख पैदा हुआ, पचास हजार पैदा हुआ। यह दश लाख थे इसमें दो लाख बढ़े, बार लाख हुये, यह तो धूल के खर्च बढ़ते रहते हैं। तब यह भगवान के बहीखाते क्या कहते हैं ? उसे देखो

न ! आहाहा ! सुरेन्द्रजी ! है न सामने ? तीन प्रकार कहे, तीनों का फल संसार है। आहाहाहाहा ! आहा !

अभी पहले समझें तो ! पहली वस्तु अभी व्यवहार। आहाहा ! (श्रोता :- आपने अभी उपदेश दिया यह भी व्यवहार है) हाँ यह व्यवहार है। (श्रोता :- ऐसा समझे तो अवश्य कि यह व्यवहार का उपदेश है, यह कहाँ निश्चय का उपदेश है) यहाँ तो ग्यारहवीं गाथा... जैनदर्शन सर्वज्ञ जैनशासन का प्राण है। क्योंकि जैनशासन खड़ा कैसे रहता है ? अर्थात कि जैन धर्म उत्पन्न कैसे होता है ? कि त्रिकाली द्रव्य के आश्रयसे उत्पन्न होता है और चारों अनुयोग के कथन का तात्पर्य वीतरागता है। यह पंचास्तिकाय एकसौ बहत्तर गाथा (में) चारों अनुयोग के शास्त्र का फल वीतरागता है।

और वीतरागता ! वह कैसे प्रगट हो ? कि त्रिकाली द्रव्य के आश्रय से वीतरागता प्रगट होती (है)। पर के आश्रय से राग होता (है) पर के आश्रय से वीतरागता नहीं होती। समझ में आया ? चाहे तो भगवान की विनय करे, भक्ति करे परंतु यह पर आश्रय है राग है। आहाहाहाहा ! ज्ञान में - ऐसा आता कि... सामयिक करना, उपवास करना, विनय करना, शब्द अक्षर बराबर शुद्ध जानना, स्पष्ट अक्षर उसका अर्थ बराबर जानना, उभय अर्थात् दोनों को बराबर जानना। आहाहा ! ऐसी बात तो व्यवहार की जिनवाणी में भी आती है। फिर भी ! (उसका फल संसार) आहाहा ! ऐसी बात है प्रभु !

क्योंकि ? त्रिकाली प्रभु जो अभेद वस्तु है, उसके आश्रय बिना धर्म की शुरुआत सम्यग्दर्शन होता नहीं। उसका आश्रय करने के लिये उसे सत् कहा और व्यवहार एवं पर्याय के होने पर भी उसका लक्ष्य छुडाने, उसका आश्रय छुड़ाने यह `नहीं' - ऐसा कहा।

अब तो (व्यवहार) `है' - ऐसा तो जिनवाणी कहती है। यहाँ `नहीं' कहा गौणरूप में कि गौणरूप से नहीं कहा न ? परंतु भावरूप में है कि नहीं ? तब भावरूप से यहाँ जिनवाणी... निश्चय सम्यग्दृष्टि ज्ञानी को भी बीच में व्यवहार निमित्त-सहचार रूप में, सम्यग्दर्शन के व्यवहार आठ अंग, ज्ञान के व्यवहार आठ अंग, चारित्र का व्यवहार व्रत, तप, नियम, समिति, गुप्ती का भाव, तप का भाव अनशन, अनोदर, वीर्यचाररूप शुभभाव में... शुभभाव का वीर्यचार - इसका कथन जिनवाणी में आता है न ? क्यों ? कि निश्चय है इसके साथ - ऐसा सहचर इसप्रकार होता है - ऐसा देखकर जिनवाणी में कहा है। परंतु यह जिनवाणी फिर - ऐसा कहती है, आहाहा ! इसका फल संसार है। आहाहाहा! समझ में आया ? कठिन बात है बापा ! वीतराग सर्वज्ञ त्रिलोकनाथ हैं ! (श्रोता :- आत्मभावना किये बिना अनुभव किस प्रकार हो ?) आतम भावना, भावना

अर्थात स्वरूप में एकाग्रता... आतम भावना भावता जीव लहे केवलज्ञान। श्रीमद् में है। आतम भावना कि राग भावना ? आहाहा !

सूक्ष्म बात है भाई ! अर्थ करनेवालोंने गाथा का स्पष्टीकरण किया है। गाथा में व्यवहार को (झूठा) गौण करके झूठा कहा है, अर्थात झूठा है - ऐसा नहीं, यह ज्ञानी को भी सहचर निमित्तरूप अंदर आता है। अस्तिरूप में आता है। आहाहाहा ! परंतु उसको गौण करके और निश्चय के आश्रय से सम्यग्दर्शन ज्ञानादि होते हैं उसे मुख्य कहकर उसे सत्य कहा है और यह सत्य तो है, परंतु सहचर में सत्य होने पर भी उसे गौण करके झूठा कहकर स्वका आश्रय कराया है।

अब कहते हैं कि गौण करके झूठा कहा। उसका अर्थ। कारण क्या ? कि यह व्यवहार का पक्ष तो अनादि का जगत के जीवों को है, और परस्पर उपदेश भी कर रहे हैं। सम्यक्त्व बिना सामयिक करो, उपवास करो, प्रतिक्रमण करो, एकासन करो- ऐसा अज्ञानियों का उपदेश एक दूसरों को है और जिनवाणी में भी निश्चय स्वद्रव्य के आश्रय से धर्म होने पर भी, उसके सहचररूप में ऐसे राग की मंदता का भाव, ज्ञान का विनय, समकित का आचार, ज्ञान का आचार, व्यवहार, चारित्र का, यह व्रतादि यह साथ में होता है। जिनवाणी में उसका उपदेश उसकी अस्ती इसलिये किया है, यह (भाव अस्तिरूप से है) जिनवाणी में होता है इसलिए उपदेस किया है। परंतु उसका फल संसार है। आहाहा ! है ? जिनवाणी में। आहाहा ! गजब काम किया है न उन्होंने। ***पण्डित तो यह कहलायें कि जिनको वस्तु की स्थिति में (जो) है वैसा स्पष्टीकरण करें, नहीं हो तो अपने मन का करें।*** (उन्हें पण्डित नहीं कहते) आहाहा !

मोहनलालजी तो शाम को आनेवाले हैं। शाम को न ? (श्रोता :- हां, जी आज निकलेंगे) आहाहा ! यही सुनने जैसी बात थी। बहुत मीठी बात ! गम्भीर बात है। आहाहा ! गजब अर्थ किया है। मूल गाथा को सत्य सिद्ध करने को, क्या अपेक्षा है, यह बात स्पष्ट की है। आहाहा ! समझ में आया ?

पुनश्च जिनवाणी में वीतराग की वाणी में व्यवहार का उपदेश आया है वह भी बहुत आया है। आहाहाहा ! है ? व्यवहार का उपदेश शुद्धनय का निमित्त देखकर शुद्धनय के साथ सहचर देखकर, शुद्धस्वभाव के आश्रय के साथ, व्यवहार सहचर उपचार देखकर उसे व्यवहार से उपदेश किया है, परंतु इसका फल संसार ही है जिनवाणी में कहा हुआ व्यवहार बहुत शास्त्रों में व्रत और तप तथा भक्ति एव विनय की बहुत व्याख्या की है व्यवहार की। आहाहा ! यह तो मात्र निमित्त सहचर देखकर, बीच में आता है, इसलिये सहचर देखकर उपदेश किया है। परंतु उसका फल तो

भटकना है चार गति में, जिनवाणी में कहा हुआ व्यवहार उसका फल भटकना है। (श्रोता :- महाव्रत का फल भटकना है ?) महाव्रत और तप इन सभी का फल भटकना है। आहाहा ! है कि नहीं परंतु इसमें देखो न !

परंतु... - ऐसा कहा है न बाद में ? - ऐसा कि जिनवाणी में - ऐसा कहा है न ? तब इससे कुछ लाभ हो कि नहीं ? जिनवाणी में - ऐसा व्यवहार का उपदेश किया है न... बापू ! यह तो सहचर देखकर, साथ में - ऐसा एक राग की मंदता का भाव, अनुभवी जीवों को भी, स्थिरता न हो तब उन्हें आये, आता है इसलिये इसे व्यवहार से उसका उपदेश दिखाया परंतु जो व्यवहार आया, उसका फल संसार है। धर्मी जीव को भी जो व्यवहार बीच में - ऐसा आये उसका फल संसार है। आहाहाहाहा !

अभी तो सभी उपदेश की पद्धति बदल गई है। प्रथम से कहें कुछ त्याग करो, ब्रह्मचर्य पालो, प्रतिमा लो, व्रत ले लो, उल्टा शुरु किया है, एकांत मिथ्यात्व के पोषण की प्ररूपणा है सभी। आहाहा ! फिर उसे अभिमान हो जाये कि हमने कहीं व्रत लिये हैं। उसे मिथ्यात्व का अभिमान हो जाता है। आहाहा !

(श्रोता :- वेष बदलना पड़े न) वेष बदले तब लोग माने इसलिये। (श्रोता :- वेष तो पलटा न ?) उत्तर :- धूल में नहीं वेष। ***यहाँ तो गृहस्थाश्रम में भी होनेपर कोट पतलून टेरीकोट का पहना हो, फिर भी अंदर में सम्यग्दर्शन है, आत्मा का ज्ञान है कि मैं शुद्ध चैतन्य अखण्ड आनंद हूँ, तब वह मोक्षमार्ग में है।*** रत्नकरण्ड श्रावकाचार में, रत्नकरण्डश्रावकाचार में आता है। पण्डितजी !

गृहस्थो मोक्षमार्गस्यो निर्मोहो नैव मोहवान।
अनगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहनो मुनेः।।३३।।

समकिती आत्मज्ञानी - आत्मअनुभवी जीव गृहस्थ आश्रम में हो, हजारों रानियाँ हों, और कोट-पतलून टेरीकोट एवं तीन रेशमी गद्दों पर सोता हो... फिर भी यह मोक्षमार्गी है और... नग्न होकर वस्त्र का टुकड़ा न रखता हो, जमीन में नीचे सोता हो, सूखा आहार करता हो, फिर भी, यह धर्म है - ऐसा माने तो मिथ्यादृष्टि है। यह संसार मार्गी है। रत्नकरण्डश्रावकाचार में है। पण्डितजी श्लोक बोले न। समझ में आया ?

अजब - गजब की बात है बापू ! बहुत बदलाव। बहुत अंतर। आहाहाहा ! (श्रोता :- ऐसे मुनि से तो- ऐसा गृहस्थ है यह श्रेष्ठ है) श्रेष्ठ है, मोक्षमार्गी है। हजारों रानियों के भोग में रहे हो और चक्रवर्ती के पद में रहे हों परंतु समकिति है वह

मोक्षमार्गी है। जिसने आत्मा का आश्रय लेकर सम्यग्दर्शनज्ञान प्रगट किया है यह मोक्षमार्गी है और जिसने पत्नी छोड़ीं और कपड़े भी छोड़े एवं नग्न हो गया, परंतु जिसने राग की एकता से लाभ हो अथवा व्यवहार करते, करते लाभ हो (- ऐसा माने) यह मिथ्यादृष्टि संसारमार्गी है। आहाहाहा ! बाबूलालजी ! ऐसी बातें है। पंडितजी ने कैसा कितना अर्थ भरा है ? आहाहा ! (श्रोता :- पण्डितजी ऐसे ही हों) आहा ! वस्तु स्थिति है ऐसी ! यह तो वस्तु... आहा !

परंतु... - ऐसा कहा है न फिर कि जिनवाणी में व्यवहार का उपदेश बहुत किया है न ! शास्त्र में चरणानुयोग में कितने अधिकार। करणानुयोग में कितना... कर्म से हो। ज्ञानावर्णीय ज्ञान रोके, दर्शनावगीय से (दर्शन रुके)। - ऐसा व्यवहार का उपदेश तो भगवान ने भी किया है। आहाहाहा ! और मुनियों को देखकर चलना, (चाहिए) विचार कर बोलना चाहिए, निर्दोष आहार लेना, ऐषणासमिति, ईर्या, भाषा, ऐसणा आदान-निक्षेप, ऐसी समिति कहीं है। भगवान ने कहा है व्यवहार...

भले कहा हो, सुनो न ! यह तो त्रिकाली के आनंद के आश्रय से सहचर का - ऐसा राग देखकर, उसे उपचार से कथन किया है। जैसे मोक्षमार्ग (प्रकाशक) में कहा है न कि निश्चय सम्यग्दर्शन के साथ व्यवहार सम्यग्दर्शन का जो विकल्प उठता है, देव-गुरु-धर्म की श्रद्धा का। आहाहा ! उसको आरोप से सहचर देखकर निमित्त देखकर उपचार से व्यवहार समकित कहा है। यह कहीं सम्यग्दर्शन है नहीं, यह तो राग है। आहाहाहा !

(निश्चय समकित) व्यवहार समकित, यह समकित का निरूपण दो प्रकार से है, समकित दो प्रकार का नहीं, समकित तो एक ही प्रकार का है। निरूपण आया अतः लोगों को हो गया कि दो प्रकार से है न ? भगवान ने व्यवहार समकित कहा है न ? परंतु निरूपण रूप कथन है यह तो, व्यवहार का कथन है यह तो, सहचर देखकर उसका ज्ञान कराया है। आया है न यह मोक्षमार्ग (प्रकाशक) में - ऐसा कि व्यवहार निमित्तादि का ज्ञान कराने यह व्यवहार कहा है। दो सो छप्पन पेज मोक्षमार्ग प्रकाशक। आहाहाहा ! क्यों कहा - ऐसा व्यवहार कि निमित्त आदि को सहचर जानकर, ज्ञान कराने, ज्ञान कराने, करने लायक है इसलिये नहीं। आहाहा ! - ऐसा है।

प्रथम तो निवृत्ति नहीं मिले समझने की, निवृत्ति नहीं मिले और पूरे दिन बाहर के प्रपंच में उलझें हों, और उसे - ऐसा मिले, कहा न व्यवहार का उपदेश देनेवाले, इसलिए उन्हें ठीक लगे, जाने कि अपन यह भक्ति करते हैं, देवदर्शन प्रतिदिन करते हैं। बस, यह पन्द्रह मिनट आधा घण्टा पढ़ते हैं सत् स्वाध्याय, देव-गुरु की सेवा

वंदन करते हैं। बस, आहार (दान) पधारो - पधारो छह श्रावक के आचार है यह तो करते हैं। आहा..हा..!

यह तो सभी राग है, यह आचरण है ही नहीं, श्रावक का आचरण तो अंदर सम्यग्दर्शन आत्मा के आश्रय जितनी लीनता होती उतना मोक्ष का मार्ग है बीच में यह सभी भाव जिनवाणी में कहा परन्तु उसका फल भी... भी... है न भी इसका फल... कोई कहे कि जिनवाणी में कहा है इसलिये कुछ लाभ है... समझ में आया कुछ ?

वीतराग मार्ग (में) वीतराग ने स्वयं कहा है कि - ऐसा व्यवहार हो - ऐसा व्यवहार हो। परंतु... यह कहा भगवान ने अधिकांशतः यह तो सहचर और निमित्त का ज्ञान कराने को, फिर भी यह सहचर और निमित्त की दशा उसका फल संसार है। समझ में आया ? आहाहा !

निश्चय व्यवहार का बहुत स्पष्ट कथन... सत्य कर दिया है। पण्डितजी ने स्वयं, पण्डित है, यह जयचन्द पण्डित ग्रहस्थाश्रम में। तिर्यंच के समकित में एवं सिद्ध के समकित में फर्क क्या ? समकित तो दोनों एक जाति के, एक ही जाति है। आहाहा ! समझ में आया ? परंतु यह समकित क्या बापू ! लोगों में अभी... आहाहा ! हाँ देव-गुरु-धर्म की श्रद्धा करो... बस, यह सम्यग्दर्शन। अब व्रत ले लो। परंतु यहाँ ***कहते हैं देव-गुरु-धर्म की श्रद्धा का भाव आया, यह शास्त्र में कहा है यह राग और उसका फल संसार है। आहाहा ! समझ में आया ?***

शास्त्र को पढ़े, खूब सुनो... - ऐसा शास्त्रों में आता है परंतु इसका फल तो विकल्प है न विकल्प का फल बंधन है। आहाहाहा ! समझ में आया ? पुस्तक हाथ में लेकर मस्तक पर (रखकर) ऐसी विनय का भाव, समकिती को आये, परंतु फिर भी यह राग है और यह राग का फल तो बंधन है। अज्ञानी की तो बात क्या करना ? अज्ञानी को तो निश्चय नहीं और व्यवहार भी नहीं एक भी नहीं उसे तो कुछ (नहीं)। आहाहा !

(श्रोता :- ज्ञानी तो राग को हेय मानता है) हेय मानता है परंतु वह (अज्ञानी) तो भला मानता है। आहा ! आहाहा ! (श्रोता :- हेय माने तो पुनः संसार कहाँ से हो ?) फिर भी संसार है न राग है न !

ज्ञानी हेय मानता है वह (तो) मानता है परंतु भाव (आता) है उसका फल ? (श्रोता :- (राग) भाव ही संसार है ?) हाँ यह भाव ही संसार है, जगत है, भव करेगा। आहाहा ! कहा न ? यह जगपंथ है। मुनि के पंचमहाव्रतरूप अठ्ठाइस मूलगुण के परिणाम यह भी जग पंथ है संसार का पंथ है। आता है न समयसारनाटक

में, मोक्ष अधिकार का चालीसवां श्लोक है, समयसारनाटक। आहाहा !

तीन बोलों में तो निश्चयव्यवहार का स्पष्टीकरण कर डाला है। व्यवहार होता है और जिनवाणी ने भी बताया है कि सम्यग्दृष्टि ज्ञानी अंतर में स्वरूप की रमणतावाला चारित्रवंत उनको भी पंचमहाव्रत का विकल्प होता है - ऐसा जिनवाणी में कहा है। आहाहाहा ! परंतु... उन पंचमहाव्रत के विकल्पों का फल... बंधन और संसार है.

ऐसी बात वीतराग के अलावा कौन करे ? सभी। पक्षपात को लेकर बैठे है न ? है ? जिनवाणी में भी उसका फल... जिनवाणी में कहे हुये व्यवहार का फल संसार (है) अज्ञानी द्वारा कहे हुये व्यवहार की बात कहाँ (दूर) रही। आहाहा !

ईश्वर कर्त्ता है, एवं ईश्वर की भक्ति करो और इसकी तो बात ही यहाँ है नहीं। यहाँ तो परमात्मा त्रिलोकनाथ तीर्थंकर सर्वज्ञदेव उनकी भक्ति करो यह शुभभाव है। यह आता है अतः जिनवाणी में ज्ञान कराया है, परंतु इसका फल बंधन है, समझ में आया ? आहाहाहा !

शुद्धनय का पक्ष तो कभी आया नहीं। देखा ? पक्ष का अर्थ यह शुद्धचैतन्य है उसका आश्रय कभी आया नहीं। आहा ! है ? उसका उपदेश भी विरल है। आहाहा ! पक्ष कभी आया नहीं। कभी नहीं आया इसका अर्थ यह कि शुद्ध चैतन्य वस्तु है, उसका आश्रय एक क्षण भी कभी भी आया नहीं। नौवी ग्रैवेयक (गया) अनंतबार दिगम्बर मुनि हुआ तथा हजारो रानी छोड़ी और पंचमहाव्रत निरतिचार (पाले) उसके निमित्त से भोजन बना कर दे, तब प्राण जायें तब भी न ले - ऐसा अनंतबार पाला परंतु उसे शुद्ध चैतन्य प्रभु अंदर भिन्न है, इस क्रियाकाण्ड के विकल्प से... उसका आश्रय नहीं लिया, उसका पक्ष नहीं किया। आहाहा ! समझ में आया ? आहाहाहा ! (श्रोता :- पक्ष का अर्थ क्या ?) आश्रय। वह व्यवहार का पराश्रय है, इसका स्वाश्रय नहीं लिया। यह कहेंगे।

देखो `शुद्धनय के ग्रहण का फल मोक्ष जानकर' फिर - ऐसा कहा है पीछे, आयेगा इसमें तुरंत फिर यहाँ (कहा) शुद्ध नय का पक्ष तो कभी आया नहीं। अर्थात कि आत्मा का कभी भी ग्रहण किया नहीं। आहाहा ! अखण्डानंद प्रभु शुद्धचैतन्य इसकी तो दृष्टि कभी की नहीं। वैसे तो ग्यारह अंग पढ़े है, पंचमहाव्रत पाले, परंतु यह चैतन्यशुद्ध है उसका आश्रय किया नहीं। सभी व्यवहार का आश्रय करके रुक गया है। आहाहा !

शुद्धनय का पक्ष तो कभी आया नहीं, अर्थात क्या ? जिसका फल मोक्ष है, ऐसे उस स्वद्रव्य का आश्रय तो कभी आया नहीं। यह यहाँ कहते हैं फिर उसका फल मोक्ष है - ऐसा बताया है। जिस प्रकार उस व्यवहार को जैसे जिनवाणी में

कहा, उसका फल संसार है, और इस शुद्धनय का पक्ष आश्रय है, इसका फल मोक्ष है। समझ में आया? आहा ! इसका पक्ष आया नहीं, और इसका उपदेश भी विरल है, इसका उपदेश विरल कहीं है। शेष तो सभी जगह यह अधिकतर मिथ्यात्व का (उपदेश) व्यवहार की श्रद्धा है।

विशेष कहने में आयेगा। (प्रमाण वचन गुरुदेव !)